न्यायालय

सहायक कलक्टर/उपखण्ड अधिकारी

गुढामालानी–बाड़मेर

(पीठासीन अधिकारी –केशव कुमार मीना आर.ए.एस.)

वाद संख्याः– 2023 / 430 दर्ज तिथिः–19.06.2023

वादी		प्रतिवादी
सदराम वगैरह	बनाम	तहसीलदार गुड़ामालानी
जरिये अधिवक्ता श्री चिमनसिंह चौधरी		जरीये अधिवक्ता श्री जगदीश विश्नोई

प्रार्थना पत्र अन्तर्गत आदेश–09 नियम–04
सिविल प्रक्रिया संहिता–1908
निर्णय तिथिः–20.03.2025

–:निर्णयः–

1. आज यह पत्रावली प्रार्थना–पत्र सिविल प्रक्रिया संहिता–1908 के आदेश–09 नियम–04 के अन्तर्गत बाबत् निर्णय प्रस्तुत हुई। प्रकरण का सुक्ष्म एवं सारतः वृतान्त इस प्रकार है कि प्रार्थी ने सिविल प्रक्रिया संहिता–1908 के आदेश–09 नियम–04 के तहत हाजा न्यायालय में प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किया। उक्त प्रार्थना पत्र का विवरण निम्न प्रकार हैः–
   - कि हाजा न्यायालय द्वारा दिनांक 18.10.2022 को उक्त पत्रावली जवाबदावा प्रतिवादी में नियत की गई। लेकिन दिनांक 18.10.2022 को प्रार्थीगण की अनुपस्थिति में उक्त पत्रावली अदम हाजिरी अदम पैरवी में खारिज कर दी गई।
   - उक्त पत्रावली की सुनवाई तिथि के बारे में प्रार्थीगण को जानकारी नहीं थी। प्रार्थीगण को अधिवक्ता द्वारा पेशी पर आने से मना किया गया था। साथ ही प्रार्थी के अधिवक्ता बाड़मेर न्यायालय में व्यस्त रहने के कारण न्यायालय पर उपस्थित नहीं हो सके। प्रार्थी द्वारा उक्त एकतरफा कार्यवाही की सूचना दिनांक 09.06.2023 को प्रमाणित प्रति प्राप्त करने पर हुई। वर्तमान में उक्त पत्रावली का गुणवागुण पर निर्णय नहीं होने से प्रार्थीगण न्याय से वंचित रहेंगे। अतः उक्त प्रार्थना–पत्र स्वीकार किया जाकर उक्त पत्रावली को पुनः सुनवाई हेतु रखा जावे।

2. प्रकरण दर्ज रजिस्टर किया जाकर अप्रार्थीगण को तलब किया गया। बाद विधिवत तामिल अप्रार्थी संख्या 05–08 असालनत–वकालतन उपस्थित न्यायालय हुए। अप्रार्थी संख्या 05–08 के अतिरिक्त शेष अप्रार्थीगण के विरूद्ध एकतरफा कार्यवाही अमल में लाई गई। अप्रार्थी संख्या 05–08 के अधिवक्ता द्वारा जवाब प्रस्तुत करते हुए निम्न प्रकार निवेदन किया गयाः–
   - कि प्रार्थीगण का मूल प्रार्थना–पत्र तरमीम दुरूस्ती से संबंधित था। जो कि अदम हाजिरी अदम पैरवी में दिनांक 18.10.2022 को खारिज किया गया। प्रार्थी का निवास न्यायालय के मुख्यालय से बिल्कुल समीप

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.04.03 13:12:08 IST
Reason: SelfAttested

अवस्थित है। अतः प्रार्थी को अपने मूल प्रार्थना—पत्र के खारिज होने की पूर्ण जानकारी थी।

- कि वादी द्वारा अपने पूर्व अधिवक्ता से सम्पर्क व सलाह मशवरा करते हुए अपना मूल प्रार्थना—पत्र स्वयं खारिज करवाया था। अतः प्रार्थी का प्रार्थना—पत्र खारिज किया जावे।

3. प्रकरण में बहस सुनी गई। दौराने बहस विद्वान अधिवक्ता प्रार्थी ने दौराने जिरह प्रार्थना पत्र के तथ्यों को दौहराते हुये निवेदन किया कि उक्त पत्रावली की सुनवाई तिथि के बारे में प्रार्थीगण को जानकारी नहीं थी। साथ ही उक्त जानकारी प्रार्थीगण के अधिवक्ता द्वारा प्रार्थीगण को नहीं दी गई। वर्तमान में उक्त पत्रावली का गुणवागुण पर निर्णय नहीं होने से प्रार्थीगण न्याय से वंचित रहेंगे। अतः उक्त प्रार्थना—पत्र स्वीकार किया जाकर उक्त पत्रावली को पुनः सुनवाई हेतु रखा जावे। दौराने बहस विद्वान अधिवक्ता अप्रार्थी ने निवेदन किया कि सुनवाई की तिथि को वादी व उनके अधिवक्ता को सुनवाई की तिथि की जानकारी मिलने के बाद भी न्यायालय पर उपस्थित नहीं हुए। प्रार्थी द्वारा अपने प्रार्थना—पत्र में मूल वाद के खारिज होने की जानकारी होने की तिथि के बारे में कोई अभिकथन नहीं किये हैं।

Provision

4. प्रकरण में पत्रावली का अवलोकन किया गया व बहस पर मनन किया गया है। प्रकरण में हाजा न्यायालय पर विचाराधीन प्रकरण पहाड़सिंह बनाम देवाराम प्रकरण संख्या 62/2018 के अदम पैरवी अदम हाजिरी में खारिज होने की कार्यवाही को निरस्त करते हुए पुनः सुनवाई पर लेने हेतु सिविल प्रक्रिया संहिता—1908 के आदेश—09 नियम—04 के तहत प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किया गया है। प्रकरण में विश्लेषण से पूर्व सर्वप्रथम सिविल प्रक्रिया संहिता—1908 के आदेश—09 नियम—04 के प्रावधान का प्रकरण में अवलोकन किया जाना उचित प्रतीत होता है। अतः सिविल प्रक्रिया संहिता—1908 के आदेश—09 नियम—04 के प्रावधान का उद्धरण इस प्रकार हैः—

ORDER IX
Appearance of parties and consequence of non-appearance

> ***4. Plaintiff may bring fresh suit or Court may restore suit to file.—****Where a suit is dismissed under rule 2 or rule 3, the plaintiff may (subject to the law of limitation) bring a fresh suit; or he may apply for an order to set the dismissal aside, and if he satisfies the Court that there was sufficient cause for such failure as is referred to in rule 2, or for his non-appearance, as the case may be, the Court shall make an order setting aside the dismissal and shall appoint a day for proceeding with the suit.*

Interpretation

5. प्रकरण में विश्लेषण से पूर्व सर्वप्रथम सिविल प्रक्रिया संहिता—1908 के आदेश—09 नियम—04 के प्रावधान की माननीय न्यायालयों द्वारा की गई व्याख्या का प्रकरण में अवलोकन किया जाना उचित प्रतीत होता है। इस संदर्भ में माननीय उड़ीसा उच्च न्यायालय द्वारा AIR 1966 ORISSA 232 उनवान *Prahlad Pursty vs Sheokh Abdul Rahman* में दिनांक 21.01.1966 को दिये गये निर्णय में सिविल प्रक्रिया संहिता—1908 के आदेश—09 नियम—04 के प्रावधान की विवेचना करते हुए न्यायिक दृष्टांत प्रतिपादित किये है। जिसके प्रासंगिक अंश का उद्धरण इस प्रकार हैः—

> *2. Order 9, Rule 3, C. P. C. lays down that where neither party appears when the suit is called on for hearing, the Court may make an order that the suit be dismissed. Order 9, Rule 4 enacts that where a suit is dismissed under Rule 2 or Rule 3, the plaintiff may (subject to the law of limitation) bring a fresh suit;*

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.04.03 13:12:08 IST
Reason: SelfAttested

or he may apply for an order to set the dismissal aside and if he satisfies the Court that there was sufficient cause for his not paying the Court fee and postal charges (if any) required within the time fixed before the issue of the summons, or for his non-appearance, as the case may be, the Court shall make an order setting aside the dismissal and shall appoint a day for proceeding with the suit.

If the suit is dismissed under Order 9, Rule 8. C. P. C. where the defendant appears and the plaintiff does not appear when the suit is called on for hearing, Order 9, Rule 9 prescribes that the plaintiff may apply for an order to set the dismissal aside. Order 9, Rule 9, Sub-rule (2) lays down that no order shall be made under this rule unless notice of application has been served on the opposite party.

The learned Munsif examined all the provisions and was of opinion that as Order 9, Rule 9 (2) clearly makes provision for service of the notice of the application for restoration on the opposite party, defendant has no right to contest the proceeding under Order 9, Rule 4 which makes no provision for service of notice of the application on the opposite party.

3. Thus two important questions arise for consideration:

(i) *Whether service of notice on the defendant in a proceeding under Order 9, Rule 4, C. p. C. is mandatory; and*
(ii) *Even if the service is not mandatory, whether the defendant can be debarred from contesting the proceeding when he is present in Court and wants to contest the same.*

4. Order 9, Rules 9 and 14 make it clear that service of notice on the opposite party is mandatory. Rule 14 says that no decree shall be set aside on an application under Order 9, Rule 13, unless notice thereof has been served on the opposite party. Order 9, Rule 4 does not make similar provision. Absence of corresponding provision in Order 9, Rule 4 does not necessarily mean that in no case service of notice is mandatory. It can, however, be said generally that notice on the opposite party need not be served in a proceeding under Order 9, Rule 4. In certain cases, service of such notice is essential. In ILR 1949-1 Cut 572: (AIR 1951 Orissa 266), Ratnakar Ray v. Kulamoni Ray, a Bench of this Court examined this question. Ray, C. J. observed as follows:

> *"If the suit had not been set down ex parte against them and if they were going to be bound by the order of restoration that had been passed, I do not understand how any order affecting them could be passed in their absence. Some support is prayed in aid from the absence of a provision in the terms or the like of Sub-rule (2) of Rule (9) of the order from Rule 4. But that does not necessarily mean that in any default under Order IX, Rule 3, restoration can be had in the absence of the opposite parties. There can be a case in which defendant has not at all appeared or having appeared has not filed any defence. In such cases it is quite possible that the Court in its discretion, may say that no notice is necessary to be served upon him in the matter of restoration, as he must be served again after the suit is restored to its file. But what about the case in which the defendant had entered into contest and had put the plaintiff to proof of his case? In these cases certainly the*

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.04.03 13:12:08 IST
Reason: SelfAttested

dismissal of the plaintiffs' suit, be it under whatever provision of the Code, gives rise to a valuable right in his favour. It is difficult to conceive that they can be deprived of that right without being heard. It may be said even without restoration the plaintiff has a right to fresh suit on the same cause of action. It may be-so, but that does not answer the defendants cause. It may be for the purpose of a fresh suit lot of money is necessary by way of payment of court-fees and the plaintiff may not be able to institute a fresh suit. There is always many a slip between cup and lip. Under the circumstances, the right to prevent restoration of the suit is no doubt a valuable right".

The aforesaid observation has my respectful concurrence. The position, therefore is that generally a notice to the opposite party is not essential in a proceeding under Order 9, Rule 4, C. P. C. There may, however be cases where a valuable right of the defendant may be affected. In such cases service of notice is mandatory. It is not necessary to examine whether service of notice in this case was mandatory as in fact without service of notice the defendant appeared in the case and wanted to contest.

Audi Alteram Partem

6. इसी प्रकार प्रक्रियात्मक कानून एवं सुनवाई के प्राकृतिक सिद्धांत के मध्य संबंधों को समझना प्रकरण में आवश्यक है। इस हेतु माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील 214 / 1954 उनवान *Sangram Singh vs Election Tribunal, Kotah, Bhurey Lal Baya* में दिनांक 22.03.1955 को दिये गये निर्णय में सिविल प्रक्रिया संहिता–1908 के आदेश–09 नियम–07 के प्रावधान की विस्तृत विवेचना करते समय सुनवाई के अधिकार एवं प्रक्रियात्मक कानून के मध्य संबंधों की विवेचना की है। उक्त न्यायिक दृष्टांत के सिविल प्रक्रिया संहिता–1908 के आदेश–09 नियम–04 के प्रावधान के तहत प्रस्तुत प्रार्थना–पत्र के निर्णयन में प्रासंगिकता स्पष्ट है। अतः उक्त न्यायिक दृष्टांत के प्रासंगिक पैरा का उद्धरण इस प्रकार हैः–

Next, there must be ever present to the mind the fact that our laws of procedure are grounded on a principle of natural justice which requires that men should not be condemned unheard, that decisions should not be reached behind their backs, that proceedings that affect their lives and property should not continue in their absence and that they should not be precluded from participating in them. Of course, there must be exceptions and where they are clearly defined they must be given effect to. But taken by and large, and subject to that proviso, our laws of procedure should be construed, wherever that is reasonably possible, in the light of that principle.

The existence of such a principle has been doubted, and in any event was condemned as unworkable and impractical by O'Sullivan, J. in Hariram v. Pribhdas. He regarded it as an indeterminate term "liable to cause misconception" and his views were shared by Wanchoo, C. J. and Bapna, J. in Rajasthan: Sewa Ram v. Misrimal. But that a law of natural justice exists in the sense that a party must be heard in a Court of law, or at any rate be afforded an opportunity to appear and defend himself, unless there is express provision to the contrary, is, we think, beyond dispute. See the observations of the Privy Council in Balakrishna Udayar v. Vasudeva Ayyar, and especially in T. M. Barret v. African Products Ltd. where Lord Buckmaaster said "No forms of procedure should ever be permitted to exclude the presentation of a litigant's defence". Also Hari Vishnu's case which we have just quoted.

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.04.03 13:12:08 IST
Reason: SelfAttested

> *In our opinion, Wallace, J. was right in VenkataSubbiah v. Lakshminarassimham in holding that "One cardinal principle to be observed in trials by a Court obviously is that a party has a right to appear and plead his cause on all occasions when that cause comes on for hearing", and that "It follows that a party should not be deprived of that right and in fact the Court has no option to refuse that right, unless the Code of Civil Procedure deprives him of it".*

Sufficient Cause

7. इसी प्रकार पक्षकार द्वारा प्रस्तुत पर्याप्त कारण एवं सुनवाई के प्राकृतिक सिद्धांत के मध्य संबंधों को समझना प्रकरण में आवश्यक है। इस हेतु माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील 768 / 1963 उनवान *Arjun Singh vs Mohindra Kumar* में दिनांक 13.12.1963 को दिये गये निर्णय में सिविल प्रक्रिया संहिता–1908 के आदेश–09 नियम–07 के प्रावधान के अनुप्रयोग के लिए आवश्यक कारक (Good Cause) के बारे में विवेचना करते हुए न्यायिक दृष्टांत प्रतिपादित किये है। उक्त न्यायिक दृष्टांत के सिविल प्रक्रिया संहिता–1908 के आदेश–09 नियम–04 के प्रावधान के तहत प्रस्तुत प्रार्थना–पत्र के निर्णयन में प्रासंगिकता स्पष्ट है। अतः उक्त न्यायिक दृष्टांत के प्रासंगिक पैरा का उद्धरण इस प्रकार हैः–

> *Before proceeding to deal with the arguments addressed to us by Mr. Setalvad-learned counsel for the appellant, it would be convenient to mention a point, not seriously pressed before us, but which at earlier stages was thought to have considerable significance for the decision of this question viz., the difference between the words "good cause" for non- appearance in O. IX, r. 7 and "sufficient cause" for the same purpose in O. IX, r. 13 as pointing to different criteria of "goodness" or "sufficiency" for succeeding in the two proceedings, and as therefore furnishing a ground for the inapplicability of the rule of resjudicata. As this ground was not seriously mentioned before us, we need not examine it in any detail, but we might observe that we do not see any material difference between the facts to be established for satisfying the two tests of "good cause" and " sufficient cause". We are unable to conceive of a "good cause" which is not "sufficient" as affording an explanation for non-appearance, nor conversely of a "sufficient cause" which is not a good one and we would add that either of these is not different from "good and sufficient cause" which is used in this context in other statutes. If, on the other hand, there is any difference between the two it can only be that the requirement of a "good cause" is complied with on a lesser degree of proof than that of "sufficient cause" and if so, this cannot help the appellant, since assuming the applicability of the principle of res judicata to the decisions in the two proceedings, if the court finds in the first proceeding, the lighter burden not discharged, it must afortiori bar the consideration of the same matter in the later., where the standard of proof of that matter is, if anything, higher.*

8. इसी प्रकार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील 1467 / 2011 उनवान *Parimal vs Veena @ Bharti* में दिनांक 08.02.2011 को दिये गये निर्णय में सिविल प्रक्रिया संहिता–1908 के आदेश–09 नियम–13 के प्रावधान के अनुप्रयोग के लिए आवश्यक द्वितीय कारक (Sufficient Cause) के बारे में न्यायिक दृष्टांत प्रतिपादित किये है। उक्त न्यायिक दृष्टांत सिविल प्रक्रिया संहिता–1908 के आदेश–09 नियम–04 के प्रावधान के अनुप्रयोग के लिए आवश्यक कारक से तुलना करने हेतु आवश्यक है। जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण इस प्रकार हैः–

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.04.03 13:12:08 IST
Reason: SelfAttested

> *9. "Sufficient Cause" is an expression which has been used in large number of Statutes. The meaning of the word "sufficient" is "adequate" or "enough", in as much as may be necessary to answer the purpose intended. Therefore, word "sufficient"*

embraces no more than that which provides a platitude which when the act done suffices to accomplish the purpose intended in the facts and circumstances existing in a case and duly examined from the view point of a reasonable standard of a cautious man. In this context, "sufficient cause" means that party had not acted in a negligent manner or there was a want of bona fide on its part in view of the facts and circumstances of a case or the party cannot be alleged to have been "not acting diligently" or "remaining inactive". However, the facts and circumstances of each case must afford sufficient ground to enable the Court concerned to exercise discretion for the reason that whenever the court exercises discretion, it has to be exercised judiciously. (Vide: Ramlal & Ors. v. Rewa Coalfields Ltd., AIR 1962 SC 361; Sarpanch, Lonand Grampanchayat v. Ramgiri Gosavi & Anr., AIR 1968 SC 222; Surinder Singh Sibia v. Vijay Kumar Sood, AIR 1992 SC 1540; and Oriental Aroma Chemical Industries Limited v. Gujarat Industrial Development Corporation & Another, (2010) 5 SCC 459).

Laps of Advocate

9. इसी प्रकार पक्षकार के अधिवक्ता के स्तर पर खामी एवं सुनवाई के प्राकृतिक सिद्धांत के मध्य संबंधों को समझना प्रकरण में आवश्यक है। इस हेतु माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील 484/2005 उनवान *State Of Nagaland vs Lipok Ao & Ors* में दिनांक 01.04.2005 को दिये गये निर्णय में परिसीमा अधिनियम–1963 की धारा–05 प्रावधान के तहत देरी के उपशमन के लिए कारकों (Lapse of Advocate) के संबंध में विवेचना करते हुए विस्तृत व्याख्या की है। उक्त न्यायिक दृष्टांत सिविल प्रक्रिया संहिता–1908 के आदेश–09 नियम–04 के प्रावधान के तहत प्रस्तुत प्रार्थना–पत्र के निर्णयन में प्रासंगिकता रखते हैं। अतः उक्त न्यायिक दृष्टांत के जिसके प्रासंगिक पैरा का उद्धरण इस प्रकार हैः–

What constitutes sufficient cause cannot be laid down by hard and fast rules. In New India Insurance Co. Ltd. v. Shanti Misra (1975 (2) SCC 840) this Court held that discretion given by Section 5 should not be defined or crystallised so as to convert a discretionary matter into a rigid rule of law. The expression "sufficient cause" should receive a liberal construction. In Brij Indar Singh v. Kanshi Ram (ILR (1918) 45 Cal 94 (PC) it was observed that true guide for a court to exercise the discretion under Section 5 is whether the appellant acted with reasonable diligence in prosecuting the appeal. In Shakuntala Devi Jain v. Kuntal Kumari (AIR 1969 SC 575) a Bench of three Judges had held that unless want of bona fides of such inaction or negligence as would deprive a party of the protection of Section 5 is proved, the application must not be thrown out or any delay cannot be refused to be condoned.

In Concord of India Insurance Co. Ltd. v. Nirmala Devi (1979 (4) SCC 365) <u>which is a case of negligence of the counsel which misled a litigant into delayed pursuit of his remedy, the default in delay was condoned</u>. In Lala Matu Din v. A. Narayanan (1969 (2) SCC 770), <u>this Court had held that there is no general proposition that mistake of counsel by itself is always sufficient cause for condonation of delay. It is always a question whether the mistake was bona fide or was merely a device to cover an ulterior purpose.</u> In that case it was held that the mistake committed by the counsel was bona fide and it was not tainted by any mala fide motive.

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.04.03 13:12:08 IST
Reason: SelfAttested

In State of Kerala v. E.K. Kuriyipe (1981 Supp SCC 72), it was held that whether or not there was sufficient cause for condonation of delay is a question of fact dependant upon the facts and circumstances of the particular case. In Milavi Devi v. Dina Nath (1982 (3) SCC 366), it was held that the appellant had sufficient cause for not filing the appeal within the period

of limitation. This Court under Article 136 can reassess the ground and in appropriate case set aside the order made by the High Court or the Tribunal and remit the matter for hearing on merits. It was accordingly allowed, delay was condoned and the case was remitted for decision on merits.

Due diligence

10. इसी प्रकार पक्षकार द्वारा किये गये कार्यकरण एवं सुनवाई के प्राकृतिक सिद्धांत के मध्य संबंधों को समझना प्रकरण में आवश्यक है। इस हेतु माननीय उच्च न्यायालय, दिल्ली द्वारा CM (M) 1030/2021 & CM APPL. 40806/2021 उनवान *Vijay Gupta vs Mr. Gagninder Kr. Gandhi & Ors* में दिनांक 04.07.2022 को दिये गये निर्णय में सिविल प्रक्रिया संहिता—1908 के आदेश—06 नियम—17 के परंतुक में बताए गए (Due diligence) के संबंध में विवेचन करते हुए दृष्टान्त प्रतिपादित किया है। उक्त न्यायिक दृष्टांत सिविल प्रक्रिया संहिता—1908 के आदेश—09 नियम—04 के प्रावधान के तहत प्रस्तुत प्रार्थना—पत्र के निर्णयन में प्रासंगिकता रखते हैं। अतः उक्त न्यायिक दृष्टांत के प्रासंगिक पैरा का उद्धरण इस प्रकार हैः—

> 17. (..................)
> (xii) The proviso to Order VI Rule 17 prohibits, again in absolute terms (as is apparent from the use of the word "shall"), allowing of an application for amendment after commencement of the trial, *unless* the Court finds that, in spite of due diligence, the party could not have raised the matter prior thereto. The latter part of the proviso, which excepts its application where the Court is satisfied that, despite due diligence, the amendment being sought could not have been raised before trial commenced is, of course, a matter entirely within the subjective discretion of the Court. ***Chander Kanta Bansal v. Rajinder Singh Anand12*** adopts, to understand the expression "due diligence", the following definition from Words & Phrases, Pmt Edition, 13A, of the expression:
>
> > "'Due diligence' in law means doing everything reasonable, not everything possible. 'Due diligence means reasonable diligence; it means such diligence as a prudent man would exercise in the conduct of his own affairs."
>
> Having relied on the above definition, the Supreme Court, in ***Chander Kanta Bansal12***, defined "due diligence" as meaning "the diligence reasonably exercised by a person who seeks to satisfy a legal requirement or to discharge an obligation". ***Consolidated Engineering Enterprises v. Principal Secretary, Irrigation Department13***, in like terms, defined "due diligence" as "a measure of prudence or activity expected from and ordinarily exercised by a reasonable and prudent person under the particular circumstances". Importantly, therefore, "due diligence" connotes *reasonable* diligence, keeping in view *the circumstances of the case*. These twin considerations have, therefore, to inform the Court seized with the issue of whether a litigant, before it, had exercised "due diligence". The elasticity of the expression is self-evident. If trial has commenced, the Court would have to examine, on facts, whether the party was unable to raise the matter before trial commenced, despite due diligence.

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.04.03 13:12:08 IST
Reason: SelfAttested

11. इसी प्रकार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील अपील 1893 / 2008 उनवान *Chander Kanta Bansal vs Rajinder Singh Anand* में दिनांक 11.03.2008

को दिये गये निर्णय में सिविल प्रक्रिया संहिता–1908 के आदेश–06 नियम–17 के परंतुक में बताए गए (Due diligence) के संबंध में विवेचन करते हुए दृष्टान्त प्रतिपादित किया है। उक्त न्यायिक दृष्टांत सिविल प्रक्रिया संहिता–1908 के आदेश–09 नियम–04 के प्रावधान के तहत प्रस्तुत प्रार्थना–पत्र के निर्णयन में प्रासंगिकता रखते हैं। अतः उक्त न्यायिक दृष्टांत के प्रासंगिक पैरा का उद्धरण इस प्रकार हैः–

> *11. (..........)It was brought to our notice that both sides have closed their evidence and completed their argument, but only at this stage the defendant filed the said application for amendment of her written statement. As discussed above, though first part of Rule 17 makes it clear that amendment of pleadings is permitted at any stage of the proceeding, the proviso imposes certain restrictions. It makes it clear that after the commencement of trial, no application for amendment shall be allowed. However, if it is established that in spite of "due diligence" the party could not have raised the matter before the commencement of trial depending on the circumstances, the court is free to order such application. The words "due diligence" has not been defined in the Code. According to Oxford Dictionary (Edition 2006), the word "diligence" means careful and persistent application or effort.*
>
> > *"Diligent" means careful and steady in application to one's work and duties, showing care and effort. As per Black's Law Dictionary (Eighth Edition), "diligence" means a continual effort to accomplish something, care; caution; the attention and care required from a person in a given situation. "Due diligence"*
>
> *means the diligence reasonably expected from, and ordinarily exercised by, a person who seeks to satisfy a legal requirement or to discharge an obligation. According to Words and Phrases by Drain-Dyspnea (Permanent Edition 13A) "due diligence", in law, means <u>doing everything reasonable, not everything possible. "Due diligence" means reasonable diligence; it means such diligence as a prudent man would exercise in the conduct of his own affairs.</u> It is clear that unless the party takes prompt steps, mere action cannot be accepted and file a petition after the commencement of trial. As mentioned earlier, in the case on hand, the application itself came to be filed only after 18 years and till the death of her first son Sunit Gupta, Chartered Accountant, had not taken any step about the so-called agreement. Even after his death in the year 1998, the petition was filed only in 2004. The explanation offered by the defendant cannot be accepted since she did not mention anything when she was examined as witness.*

Inherent Power of Court

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.04.03 13:12:08 IST
Reason: SelfAttested

12. इसी प्रकार प्रक्रियात्मक कानून एव सुन[illegible]कृतिक सिद्धांत के मध्य संबंधों के तहत न्यायालय की अंतर्निहित [illegible] में आवश्यक है। इस हेतु माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सि[illegible] अपील 768 ⁄ 1963 उनवान *Arjun Singh vs Mohindra Kumar* में दिनांक 13.12.1963 को दिये गये निर्णय में सिविल प्रक्रिया संहिता–1908 के आदेश–09 नियम–07 के प्रावधान के अनुप्रयोग के लिए न्यायालय की भूमिका एवं दृष्टिकोण (Role/Approch of Court) के बारे में विवेचना

करते हुए न्यायिक दृष्टांत प्रतिपादित किये है। उक्त न्यायिक दृष्टांत के सिविल प्रक्रिया संहिता—1908 के आदेश—09 नियम—04 के प्रावधान के तहत प्रस्तुत प्रार्थना—पत्र के निर्णयन में प्रासंगिकता स्पष्ट है। अतः उक्त न्यायिक दृष्टांत के प्रासंगिक पैरा का उद्धरण इस प्रकार हैः—

> *It is common ground that the inherent power of the Court cannot override the express provisions of the law. In other words, if there are specific provisions of the Code dealing with a Particular topic and they expressly or by necessary implication exhaust the scope of the powers of the Court or the jurisdiction that may be exercised in relation to a matter the inherent power of the Court cannot be invoked in order to cut across the powers conferred by the Code. The prohibition contained in the Code need not be express but may be implied or be implicit from the very nature of the provisions that it makes for covering the contingencies to which it relates, We shall confine our attention to the topic on hand, namely applications by defendants to set aside ex parte orders passed against them and reopen the proceedings which had been conducted in their absence.*

Reason

13. इसी प्रकार न्यायालय द्वारा निर्णित प्रकरण में निर्णय के आधार/विश्लेषण में अपनाई गई तार्किकता को भी प्रकरण में समझना आवश्यक है। इस हेतु माननीय इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा CRP(IO)/176/2022 उनवान *Assam Gramin Vikash Bank vs Prakash Borah* में दिनांक 06.08.2022 को दिये गये निर्णय में सिविल प्रक्रिया संहिता—1908 के आदेश—09 नियम—07 के प्रावधान के तहत प्रस्तुत प्रार्थना—पत्र के निर्णयन के समय निर्णय का आधार स्पष्ट करने के संबंध में विवेचना की है। उक्त न्यायिक दृष्टांत के सिविल प्रक्रिया संहिता—1908 के आदेश—09 नियम—04 के प्रावधान के तहत प्रस्तुत प्रार्थना—पत्र के निर्णयन में प्रासंगिकता स्पष्ट है। अतः उक्त न्यायिक दृष्टांत के प्रासंगिक पैरा का उद्धरण इस प्रकार हैः—

> *28. Let this Court consider the second reason. The Court below did not consider the reasons assigned in the said application and merely held the reasons were unsatisfactory. The Court was required to assign reasons why the grounds assigned were held to be unsatisfactory. It seems that the Court below was satisfied by the first ground and did not find the necessity to record reasons while deciding whether good cause was shown or not. The said order dated 02.11.2021 therefore on the face of it, in the opinion of this Court, is liable to be interfered as the Court below had failed to exercise a Page No.# 21/23 jurisdiction conferred upon it by law.*

Allowed

14. इसी प्रकार न्यायालय द्वारा एकतरफा कार्यवाही को निरस्त करने हेतु अनुमत आवश्यक परिस्थितियों को समझना प्रकरण में आवश्यक है। इस हेतु माननीय इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा रिट पिटीशन *54978/2014* उनवान *Raj Kumar Agrawal vs Suresh Chandra Jain* में दिनांक 10.04.2015 को दिये गये निर्णय में सिविल प्रक्रिया संहिता—1908 के आदेश—09 नियम—13 के प्रावधान के अनुप्रयोग के लिए न्यायालय द्वारा अनुमत किये जाने योग्य युक्तियुक्त कारण के बारे में कुछ विशेष परिस्थितियों की विवेचना की है। उक्त न्यायिक दृष्टांत सिविल प्रक्रिया संहिता—1908 के आदेश—09 नियम—04 के प्रावधान के तहत प्रस्तुत प्रार्थना—पत्र के निर्णयन में प्रासंगिकता रखते हैं। अतः उक्त न्यायिक दृष्टांत के प्रासंगिक पैरा का उद्धरण इस प्रकार हैः—

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.04.03 13:12:08 IST
Reason: SelfAttested

> *When an application for setting aside ex parte decree is made by the defendant, the court should consider whether the defendant was prevented by "sufficient cause" from appearing before the court when the suit was called out for hearing.*

"Sufficient cause" is a question of fact.

The following causes have been held to be sufficient for the absence of the defendant;

(1)bona fide mistake as to the date of hearing;

(2)Late arrival of a train;

(3)sickness of the counsel;

(4)fraud of the opposite party;

(5)mistake of pleader in noting wrong date in diary;

(6)negligence of next friend or guardian in case of minor plaintiff or defendant;

(7)death of relative of a party;

(8)imprisonment of party;

(9)strike of advocates;

(10)no instructions pursis by a lawyer, etc.

Not Allowed

15. इसी प्रकार न्यायालय द्वारा एकतरफा कार्यवाही को निरस्त करने हेतु गैर—अनुमत आवश्यक परिस्थितियों को समझना प्रकरण में आवश्यक है। इस हेतु माननीय इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा रिट पिटीशन *54978/2014* उनवान *Raj Kumar Agrawal vs Suresh Chandra Jain* में दिनांक 10.04.2015 को दिये गये निर्णय में सिविल प्रक्रिया संहिता—1908 के आदेश—09 नियम—13 के प्रावधान के अनुप्रयोग के लिए न्यायालय द्वारा अनुमत नहीं किये जाने योग्य युक्तियुक्त कारण के बारे में कुछ विशेष परिस्थितियों की विवेचना की है। उक्त न्यायिक दृष्टांत सिविल प्रक्रिया संहिता—1908 के आदेश—09 नियम—04 के प्रावधान के तहत प्रस्तुत प्रार्थना—पत्र के निर्णयन में प्रासंगिकता रखते हैं। अतः उक्त न्यायिक दृष्टांत के प्रासंगिक पैरा का उद्धरण इस प्रकार हैः—

The following causes, on the other hand, have been held not to be sufficient for absence of the defendant for setting aside an ex parte decree;

(1)dilatory tactics;

(2)bald statement of noting wrong date in diary;

(3)negligence of party;

(4)counsel busy in other court;

(5)suit of high valuation;

(6)absence of defendant after prayer for adjournment is refused;

(7)hardship of defendant;

(8)absence to get undue advantage;

(9)mere thinking that the case will not be called out; not taking part in proceedings, etc.

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.04.03 13:12.08 IST
Reason: SelfAttested

Conduct of Party

16. इसी प्रकार पक्षकार के आचरण एवं सुनवाई के प्राकृतिक सिद्धांत के मध्य संबंधों को समझना प्रकरण में आवश्यक है। इस हेतु माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा विशेष अनुमति याचिका 17942—43 ⁄ 1999 उनवान *G.P. Srivastava vs Shri R.K. Raizada & Ors* में दिनांक 03.03.2000 को दिये गये निर्णय में सिविल प्रक्रिया संहिता—1908 के आदेश—09 नियम—07 के प्रावधान के अनुप्रयोग के लिए आवश्यक तथ्यों में से एक तथ्य पक्षकार का आचरण (Conduct of Party) को ध्यान में रखने के बारे में न्यायिक दृष्टांत प्रतिपादित किये है। उक्त न्यायिक दृष्टांत के सिविल प्रक्रिया संहिता—1908 के आदेश—09 नियम—04 के प्रावधान के तहत प्रस्तुत प्रार्थना—पत्र के निर्णयन में प्रासंगिकता स्पष्ट है। अतः उक्त न्यायिक दृष्टांत के प्रासंगिक पैरा का उद्धरण इस प्रकार हैः—

> *Under Order 9 Rule 13 C.P.C. an ex-parte decree passed against a defendant can be set aside upon satisfaction of the Court that either the summons were not duly served upon the defendant or he was prevented by any 'sufficient cause' from appearing when the suit was called on for hearing. Unless 'sufficient cause' is shown for non-appearance of the defendant in the case on the date of hearing, the Court has no power to set aside an ex-parte decree. The words "was prevented by any sufficient cause from appearing" must be liberally construed to enable the court to do complete justice between the parties particularly when no negligence or inaction is imputable to erring party. Sufficient cause for the purpose of Order 9 Rule 13 has to be construed as elastic expression for which no hard and fast guidelines can be prescribed. The courts have wide discretion in deciding the sufficient cause keeping in view the peculiar facts and circumstances of each case. The 'sufficient cause' for non appearance refers to the date on which the absence was made a ground for proceeding ex-parte and cannot be stretched to rely upon other circumstances anterior in time. If 'sufficient cause' is made out for non appearance of the defendant on the date fixed for hearing when ex-parte proceedings initiated against him, he cannot be penalised for his previous negligence which had been overlooked and thereby condoned earlier. In a case where defendant approaches the Court immediately and within the statutory time specified, the discretion is normally exercised in his favour, provided the absence was not malafide or intentional. For the absence of a party in the case the other side can be compensated by adequate costs and the lis decided on merits.*

17. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील 1467 ⁄ 2011 उनवान *Parimal vs Veena @ Bharti* में दिनांक 08.02.2011 को दिये गये निर्णय में सिविल प्रक्रिया संहिता—1908 के आदेश—09 नियम—13 के तहत प्रस्तुत प्रार्थना पत्र के निस्तारण के लिए प्रस्तुतकर्ता पक्षकार का संबंधित कार्यवाही पर आचरण को आधार नहीं मानने के बारे में विवेचना करते हुए न्यायिक दृष्टांत प्रतिपादित किया है। उक्त न्यायिक दृष्टांत सिविल प्रक्रिया संहिता—1908 के आदेश—09 नियम—04 के प्रावधान के तहत प्रस्तुत प्रार्थना—पत्र के निर्णयन में प्रासंगिकता रखते हैं। अतः उक्त न्यायिक दृष्टांत के प्रासंगिक पैरा का उद्धरण इस प्रकार हैः—

> *24. The High Court has not set aside the material findings recorded by the trial Court in respect of service of summons by process server/registered post and substituted service. The High Court failed to discharge the obligation placed on the first appellate Court as none of the relevant aspects have been dealt with in proper perspective. It w[illegible]rmissible for the High Court to take into considerat[illegible] the [illegible]duct of the appellant subsequent to passing of the ex-part[illegible]ree.*
>
> *More so, the High Court did not consider the grounds on which the trial Court had dismissed the [illegible]plication under Order IX,*

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.04.03 13:12:08 IST
Reason: SelfAttested

Rule 13 CPC filed by the respondent/wife. The appeal has been decided in a casual manner.

18. उपरोक्त विधिक प्रावधान एवं न्यायिक दृष्टांतों के संदर्भ में सिविल प्रक्रिया संहिता–1908 के आदेश–09 नियम–04 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि किसी प्रकरण में किसी पक्षकार के विरूद्ध सुनवाई की तिथि पर उपस्थित नहीं होने पर न्यायालय द्वारा एकतरफा कार्यवाही अमल में लाते हुए की गई अग्रिम कार्यवाही से पीड़ित पक्षकार द्वारा न्यायालय द्वारा की गई एकतरफा कार्यवाही को निरस्त करते हुए सुनवाई का अधिकार देने हेतु अपनी अनुपस्थिति का पर्याप्त कारण प्रस्तुत कर न्यायालय को संतुष्ट करते हुए न्यायालय से की गई एकतरफा कार्यवाही को निरस्त करने का अनुतोष प्राप्त किया जा सकता है। उक्त कानूनी प्रावधानों न्यायिक दृष्टांतों के संदर्भ में सिविल प्रक्रिया संहिता–1908 के आदेश–09 नियम–04 के तहत प्रस्तुत प्रार्थना–पत्र उक्त प्रावधान व न्यायिक दृष्टांतों द्वारा प्रतिपादित परीक्षण पर जांच किया जाना आवश्यक है।

19. प्रकरण में उक्त कानूनी प्रावधानों न्यायिक दृष्टांतों के संदर्भ में सिविल प्रक्रिया संहिता–1908 के आदेश–09 नियम–04 के तहत प्रस्तुत प्रार्थना–पत्र की उक्त प्रावधान व न्यायिक दृष्टांतों द्वारा प्रतिपादित परीक्षण पर जांच व विश्लेषण किया जाना आवश्यक है। प्रकरण में प्रार्थी द्वारा प्रार्थीगण के अधिवक्ता द्वारा सुनवाई की तिथि की जानकारी नहीं देने तथा प्रार्थीगण को रिमाण्ड पत्रावली पर पुनः सुनवाई की तिथि के बारे में जानकारी नहीं होने को आधार बताते हुए सिविल प्रक्रिया संहिता–1908 के आदेश–09 नियम–04 के तहत दिनांक 18.10.2022 को मूल प्रार्थना–पत्र के अदम पैरवी में खारिज किये जाने को निरस्त करते हुए पुनः सुनवाई पर लेने बाबत् उक्त प्रार्थना–पत्र दिनांक 19.06.2023 को प्रस्तुत किया है।

20. प्रकरण में सर्वप्रथम प्रार्थी द्वारा दिनांक 18.10.2022 को मूल प्रार्थना–पत्र के अदम पैरवी में खारिज किये जाने को निरस्त करते हुए पुनः सुनवाई पर लेने बाबत् पक्षकार के द्वारा अपनाये गये आचरण का विश्लेषण किया जाना आवश्यक है। प्रकरण में मूल प्रार्थना–पत्र दिनांक 18.10.2022 को प्रार्थीगण की अनुपस्थिति में उक्त पत्रावली अदम हाजिरी अदम पैरवी में खारिज कर दी गई। प्रकरण में प्रार्थीगण द्वारा हस्तगत प्रार्थना–पत्र अंतर्गत आदेश–09 नियम–04 वास्ते दिनांक 18.10.2022 को की गई अदम पैरवी को निरस्त करने का दिनांक 19.06.2023 को करीब 240 दिन की लम्बी अवधि के पश्चात् प्रस्तुत किया गया है। प्रकरण में प्रार्थीगण के अपील में पक्षकार होने से प्रकरण की जानकारी प्रार्थीगण को होना प्रतीत होता है। प्रार्थी को प्रकरण की जानकारी होने के उपरांत प्रार्थी द्वारा हस्तगत प्रार्थना–पत्र करीब 240 दिन की लम्बी अवधि के पश्चात् पेश करना प्रार्थी के लापरवाहीपूर्वक आचरण को स्पष्ट करता है। परंतु प्रार्थी को सुनवाई की तिथि के संबंध में जानकारी नहीं होने के कारण प्रकरण का पर्याप्त कारण के संबंध में विश्लेषण किया जाना आवश्यक है।

21. प्रकरण में सर्वप्रथम प्रार्थी द्वारा दिनांक 18.10.2022 को मूल दावा के अदम पैरवी में खारिज किये जाने को निरस्त करते हुए पुनः सुनवाई पर लेने बाबत् प्रस्तुत पर्याप्त कारण का विश्लेषण किया जाना आवश[illegible] विचारण न्यायालय में दावा प्रस्तुत करने के पश्चात् पक्षकार[illegible] में पैरवी करते हैं तथा स्वयं पक्षकार की व्यक्तिगत उपस्थिति को अनिवार्य नहीं माना जाता है। ग्रामीण पृष्ठभूमि के पक्षकार अधि[illegible] कर अपने न्यायिक प्रकरण की जानकारी अपनी सुविधा अनुसार प्राप्त करते रहते हैं। न्यायालय में विचाराधीन

Signature Not Verified
Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.04.03 13:12:08 IST
Reason: SelfAttested

कार्यवाही पर किसी सुनवाई की तिथि पर अधिवक्ता के उपस्थित नहीं होने पर एकतरफा कार्यवाही अमल में लाई जाती है। उक्त एकतरफा कार्यवाही की सूचना पक्षकार तक बहुत धीमी या किसी आकस्मिक तरीके से पहुंचती है। किसी न्यायालय में अधिवक्ता की तरफ से पैरवी में खामी का खामियाजा पक्षकार को नहीं देने बाबत् विधि का सुमान्य सिद्धांत है। अतः न्यायालय को किसी महत्वपूर्ण विवाद के प्रश्न को बिना गुणवागुण कर निर्णित किये केवल प्रक्रियात्मक कमी की वजह से न्यायालय से बाहर नहीं फेंकना चाहिए। यहां स्थिति इस प्रकार है कि दावा अभी शुरूआती चरण में है। प्रतिवादी को वादी के दावे के खण्डन हेतु पर्याप्त अवसर प्राप्त होंगे। अतः वादी के दावा को पुनः सुनवाई पर लेने से प्रतिवादी को अपूर्णनीय क्षति होना प्रतीत नहीं होता है। इस प्रकार प्रार्थी द्वारा न्यायालय प्रार्थी के प्रार्थना–पत्र को न्यायहित में गुणवागुण पर निर्णित करने हेतु सुनवाई का अवसर प्रदान करने हेतु सहमत है। अतः

आदेश है कि

प्रार्थी द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता–1908 के आदेश–09 नियम–04 के तहत प्रस्तुत प्रार्थना–पत्र स्वीकार किया जाकर मूल प्रार्थना–पत्र पर अदम पैरवी में खारिज करने की गई कार्यवाही को निरस्त करते हुए पुनः सुनवाई पर लिया जाता है।

यह निर्णय मेरे द्वारा आज दिनांक 20.03.2025 को लिखवाया जाकर हस्ताक्षर एवं मोहर युक्त जारी किया जाकर सरे इजलास सुनाया गया।

(केशव कुमार मीना आर.ए.एस)
सहायक कलक्टर
गुढ़ामालानी–बाड़मेर

Signature Not Verified

Digitally signed by Keshav Kumar Meena
Date: 2025.04.03 13:12:08 IST
Reason: SelfAttested